IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

^Fkexk ugh fonkg^ miU;kl(l=kl ls lkgl dh ,d egkxkFkk

Mk jes'k ;kno
vfl0 ikQlj & fgnh
jktdh; LukrdkRrj egkfo|ky;] dSjkuk] 'kkeyh

'थमेगा नहीं विद्रोह ' उपन्यास सन् 2008 में प्रकाशित हुआ था। दलित उपन्यासों की परंपरा बमुश्किल दो दशक पुरानी है। इस परंपरा के आरंभिक उपन्यासों के लिए सामान्यीकरण करे तो इनमें एक पैर्टन पाया जाता है। दलित जीवन वंचना में जीता है। उसको अपने महापुरूषों से प्रेरणा प्राप्त होती है। वे शिक्षा को आंदोलन की तरह अपनाते है और बदलाव की जमीन तैयार कर देते है। उमराव सिंह जाटव का उपन्यास इस मायने में अद्‌भुत है कि यह उस पैर्टन को तोडता है। यह उपन्यास , अगर रेणु के शब्दों में कहे तो उस दलित जीवन को दिखाता है– जिसमें शूल भी है , फूल भी है और धूल भी । और लेखक किसी से दामन बचा कर नहीं निकला है। यह तय करके लिखा गय उपन्यास नही है। इसमें दलित समाज में बाबा साहेब अम्बेडकर और बौद्व धर्म के विचारों की उर्जा की झलक दी गई है। लेकिन लेखक की लोकतांत्रिक चेतना अपने पात्रों को अपने वैचारिक आग्रह से सामान्य रूप से मुक्त रखती है। हम इस कथन में देख सकते है –''चार मुहल्लों में .... बॅटा है जटवाडा और इन चारों मुहल्लों में मुकदमें बाजी , जूतमपैजर , सिर फुटव्वल चलती ही रहती है। बाबा साहब के मूल मंत्र 'संघर्ष करों ' का इन्होने यही अर्थ लिया है ! आओं हम आपस में ही संघर्ष करें । '' पहले के दलित उपन्यास परंपरा से आगे यह उपन्यास अपने खुले वर्णन से आश्चर्य कर देने वाली प्रगति की मानों घोषणा करता है। और इस बात की घोषणा भी दलित समाज ही नहीं दलित लेखन धीरे धीरे आत्मविश्वास की ओर बढ रहा है।